शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 दिसम्बर 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

# डॉ. धर्मचन्द विद्यालंकार के कथा साहित्य में चित्रित कृषक जीवन

डॉ. सुरेश कुमार
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, उकलाना मण्डी,
हिसार, हरियाणा (भारत)

## शोध संक्षेप

*डॉ. धर्मचंद विद्यालंकार हिन्दी साहित्य के उदीयमान कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार, समीक्षक एवं सक्रिय राजनैतिक कार्यकर्ता हैं। वे बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं। उनका संपूर्ण कथा साहित्य लोक या ग्रामीण जीवन को समर्पित है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन और परिवेश की रुढ़ियों, अंधविश्वासों, आडम्बरों, आपदाओं, विषमताओं और अभावों जैसी अनके प्रकार की जटिलताओ के साथ ही ग्रामीणों की सादगी, सरलता, निश्छलता, कर्मठता, संवेदनशीलता आदि अनेक सद्वृतियों का भी स्वाभाविक, सजीव एवं यथार्थ चित्रण किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में धर्मचंद विद्यालंकार के कथा साहित्य में चित्रित कृषक जीवन पर विचार किया गया है।*

## प्रस्तावना

डॉ.धर्मचंद विद्यालंकार का जन्म ग्रामीण परिवेश में कृषक परिवार में हुआ है। इसलिए इनका ग्रामीण व कृषक जीवन से विशेष से विशेष लगाव रहा है। हमारे देश की 70 प्रतिशत आबादी गांव में रहती है तथा कृषि कार्यों में सलंग्न है। विद्यालंकार जी ने ग्रामीण जीवन के कष्टों को बहुत ही करीब से देखा व अनुभव किया है। कृषक जीवन बड़ा ही जटिल दुरुह है। इन सब के बादवजूद भी किसान की सादगी, कोमलता, संवेदनशीलता, निश्छलता, निरीहता, कठोर, परिश्रम और अदभ्य जिजिविषा जैसी वृतियां उसके जीवन को अधिक सुन्दर व आकर्षक बनाती है। भारतीय किसान जो देश का अन्न दाता है, वह सदियों से शोषण के अबाध चक्र में पिसता आ रहा है। वह सब चीजों को उत्पन्न करके भी उनसे दूर रहता है। वह अभावों में ही पैदा होता है और अभाव में ही इस संसार से विदा हो जाता है। भारतीय किसान की उसी मार्मिक और कारुणिक दशा सजीव एवं जीवंत चित्रण विद्यालंकार ने अपने कथा साहित्य में किया है।

## कथा साहित्य में कृषक जीवन

आजादी के सत्तर दशकों में बहुत कुछ बदल गया है, नहीं बदली तो अभागे किसान की दशा। वे आज भी भूखे है फटे हाल हैं। उन्हें उचित पारिश्रमिक नहीं मिलता। वे आत्महत्या करने को विवश हैं। उनका कर्ज चुकने का नाम ही नहीं ले रहा है। बढ़ती ब्याज दरों और लगान ने तो उसकी कमर ही तोड़ दी है।

'धरती पुत्र' कहानी में स्वाभिमानी, संघर्षशील एवं स्वतंत्रता प्रेमी किस प्रकार से अपनी पैतृक भूमि को अधिगृहित करवाकर पराधीन, आत्महीन, मजदूर के रूप में जीवन यापन कर रहा है, उसका सजीव चित्रण किया गया है। बड़े-बड़े पूंजीपति किसान की अमूल्य भूमि को कौड़ियों के भाव खरीदकर उसे मजदूर बनने को विवश कर देते हैं। 'धरती पुत्र' कहानी में किसान की इसी

दारुणस्थिति का मार्मिक चित्रण हुआ है। पूंजीपति किसान की जमीन को फार्म के नाम पर खरीदकर उसमें तरह-तरह के आलीशान बंगले बना कर, उपवन बनाकर आगे बेच देते हैं। उसे देखकर ऐसा लगता है कि मानो पतझड़ में भी बसंत की बहार हो। एक किसान जो कभी अपनी जमीन का मालिक था, अब वह पूजींपतियों को अपनी जमीन सस्ते में बेचकर माली बनने पर विवश हो जाता है, जब उस से पूछा जाता है तो इसी दीनता को प्रकट करते हुए कहता है-

अब तो उस नाहटा साहब का है।

पहले किस का था?

मेरा ही था बाबू जी

अब उसका कैसे ?

मैने बेच दिया बाबू जी,

क्यों

राजधानी क्षेत्र बणै था, नही तो उसमें जाता, सरकार तो औने पौने में खरीदती, इस नाहटा साहब ने अच्छे पैसे दे दिए।1

फिर इस जमीन से जो पैसे मिले थे उनसे भी वह स्वरोजगार न करके कुछ अपनी लड़की की शादी में लगा देता है और कुछ से मकान बना लेता है। इनके लड़के भी पढ़ लिख कर आवारा हो जाते हैं और बड़े सेठ साहूकारों की नकल करने लगते है-

नौकरी चाकरी तो मिलती कौनी, काम धाम किमै जाणते नहीं, इन सेठों की नकल करैं सै या फिर राजनीति में हांडै सै2

जिस प्रकार सेठ साहूकार पिकनिक मनाते हैं और तरह तरह की लगजरी गाड़ियों में घूमते है लाटरी खेलते हैं, उसी तरह इन किसानों के लड़के भी उनकी नकल करते हैं। किसान अपनी इसी मन की पीड़ा को प्रकट करते हुए कहता है- "जिस तरियां सेठ साहूकार हर इतवार नै अड़ै अपनी-अपनी मारुती कारों में पिकनिक मनाण ताई आवै सै क ना नई-नई छोरियों नै बिठाकै। ये म्हारै छोकरे भी उनके ख्वाब देखैं सै। अपने अपने खेतां नै बेच कै कार खरीद सै, लाटरी खेलैं सै, ठेके भी खोलण लागे।3

किसान का आदर तभी तक है जब तक उसके पास जमीन है। जमीन अर्थात धरती माता किसान की आन, बान और शान है। लोग चढ़ते सूर्य को ही प्रणाम करते हैं। जब किसान के पास जमीन थी तो सेठ साहूकार उसे चैधरी साहब, ताऊ जी कर बुलाते थे किन्तु जमीन के चले जाने के बाद तो उसका मान सम्मान भी चला गया है- "बाबू जी जब ताई लड़की अपने बाप के घर में रहै सै तब ही तो बेटी कहावै सै। शादी होने के बाद दूसरे के घर जाते ही बहू बण जा सै। जिब पहल्यां यो सेठ साहब म्हारे पास जमीन देखण ताईं आया करता था तो हमनै आदर के साथ ताउजी या चैधरी साहब या राव साहब कह था। इब तो यो हमनै भैया कह कै बुलावै सै, के हमनै कम महसूस हो सै।4

न तो राजनेता और न ही शासन प्रशासन किसान की मदद के लिए आगे आते हैं। उन्होंने धन बल व बाहुबल से उन शोषित, पीड़ित किसानों की वोट की शक्ति को अपने वश में कर लिया है-" जो इन कालोनियों में सारे लाटरी मालिक, शराब के लालच देकर ठेकेदार और प्रोपर्टी डीलर बसै है, उनने म्हारे लोगों ताई शराब की बोतल पिला के और दम दुक्कर दे कै उनकी वोट भी अपने डिब्बे में डलवा ली। अब ते म्हारे पढ़े लिखे छोकरे गांव गवांड की वोटां तै बण जाय करतै, पर इबतै लोगां कै वा शर्म भी कौन्या रही। इब ये सेठ साहूकर नोटा ते बणन लागै।5

इसी प्रकार 'पारस मणि' कहानी में भी किसान की दयनीय दशा का ही चित्रण हुआ है। कहानी का प्रमुख पात्र रमेश अपने पिता के साथ अनाज लेकर मंडी में जाता है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि आज वह सोने के ढ़ेर पर बैठा हुआ हो। अपने धन धान्य को देखकर रमेश तथा उसका पिता भविष्य के सुनहरे स्वपन देखने लगते हैं किन्तु जब वे अपना अनाज लेकर मंडी में पहुंचते है तो उनके सारे स्वपन धराशायी हो जाते हैं। उनके लिए जो सोने का ढ़ेर था, वही आज मंडी में पहंुचकर मिट्टी का ढेर बन जाता है। जब उनकी बोली की बारी आती है तो सेठ उनके अनाज में तरह तरह के मीन मेख निकालते है-

रेत बहुत ज्यादा है, दूसरा बोलता है
कंकड़ भी बहुत है/ठीक नहीं पका
नस्ल अच्छी नहीं है/जीव भी तो लगा है
सीलन भी तो है

आढ़तियों की इस प्रकार की बात सुनकर रमेश सोचता है जिस अनाज को उन्होंने बड़े परिश्रम गर्मी, सर्दी सहन कर उपजाया था, उसका इन के लिए कोई मूल्य नहीं है। अंत में मन मारकर रमेश के पिता अपने अनाज की बोली लगवा देते है- ''क्यां कहूं मैं सेठ जी।

इनमें से कोई खरीददार है नहीं
मुर्दा क्या घाट से लौटाया जा सै सेठ जी6

जब उनके अनाज की तुलाई की बारी आती है तो पल्लेदार आधे अनाज को बोरियों में मरते है और आधो अनाज को इधर-उधर बिखर देते हैं। रमेश उनका विरोध करता है तो वे कहते हैं-

यह प्याउ वाली है/यह आग सुलगाने वाला है
वह गऊशाला वाला है/वह धर्मशाला का है
यह पाठशाला का है/यह कटौती का है7

इसके साथ ही तोल में भी उनके साथ छल किया जाता है। जब वे अनाज के पैसे लेने दुकान पर जाते हैं तो उनकी रकम खाद व बीज में काट ली जाती है, विवश होकर पिता पुत्र सेठ से पांच सौ रुपये उधार लेकर चल पड़ते हैं। रमेश पांच सौ रुपये पाकर प्रसन्न था किन्तु उसके पिता हताथ थे। रमेश का मन अपने सपनों को पूरा करने को उमड़ रहा था, तो पिता को घर गृहस्थी के समान की चिंता सता रही थी। फिर भी जैसे तैसे उसका पिता समझदारी से काम लेता है। वह रमेश की इच्छा पूरी कर देता है और घर का सारा सामान उधार पर खरीद लेता है।

निरन्तर बढ़ती मंहगाई से किसान परेशान है। गरीब का तो और भी बुरा हाल है। उसके लिए तो दो जून की रोटी जुटाना भी मुश्किल हो गया है। उपर से पापी पेट कभी भरता ही नहीं। जब वे बाजार में खरीददारी कर रहे थे तो रमेश चीजों का मूल्य देखकर हैरान रह जाता है। जो चीज उन्होंने स्वयं अपने खेत में परिश्रम से पैदा की थी, उसका मूल्य कुछ भी वही था और वही चीज बाजार में कई गुणा मंहगे दामों पर मिल रही थी। यही दुविधा पूर्ण परम रमेश को बार-बार विचलित कर रहा था। इस व्यवहार को देखकर रमेश की आंखों में खून ऊतर आया था। किन्तु वह विवश था। फिर उसके पिता उसे समझाते हैं कि उनके पास पारसमणी है जो उनकी चीजों को उनके पास पंहुचते ही सोना बना देती है।

इस तरह बाल हठ कहानी में लेखक ने सामन्ती शोषण का जीवंत चित्रण किया है। कहानी का प्रमुख पात्र ठाकुर शार्दूल सिंह है। गांव में उसी के कानून चलते हैं। वह समाज के हर वर्ग का खूब शोषण करता है। जब घी की कमी हो जाती है तो 'घियावन' कर वसूलता, जब कपड़ों की कमी हो जाती तो 'कपड़ावन' कर तथा ब्याह के अवसर पर 'ब्याहवन' कर लगाता था। उस गांव में किसानों पर इस तरह के सैंकड़ों कर लगते थे।

वह खुद तो बड़ी हवेली में रहता था तथा कृषक आदि नौकर चाकर घास-फूस से बने छपरों में रहते थे। यदि कृषक का कोई बच्चा ठाकुर के बच्चों की तरह जिद्द करने लगता, तो रानी उन्हें तुरन्त फटकारते हुए कहती है- "छोटे लोगों को मुंह नहीं लगाते सोना नहीं तो ये सिर पर ही चढ़ने लगते हैं। देखो न ये माली की छोरी भी तुम्हारी देखा-देखी कांच की चूड़ियां पहनने लगी, कल को सोना, चांदी भी पहरेगी। इसकी होड़ से अहीर और गुज्जरों, मीणों और जाटों की छोरियां भी ऐसा ही करेंगी।"8 सामन्ती सोच व किसानों के शोषण व दारुण जीवन का यह कटु सत्य है।

इसी प्रकार एक अन्य कहानी 'जमीन का सच' में भी लेखक ने सामंती शोषण के शिकार किसानों का यथार्थ एवं सजीव चित्रण किया है। कृषि भूमि पर उनका कोई भी अधिकार या स्वामित्व नहीं था। राजस्व के बदले में वे किरायेदार के तौर पर कृषि कार्य करते थे। एक सौ तीस तरह के कर उन पर लगाए हुए थे। यदि कोई किसान ऐसा नहीं कर पाता था तो उसे कठोर से कठोर दण्ड दिया जाता था। इस यंत्रणा व शोषण से दुखी होकर किसान आंदोलन कर देते है। फलतः जमींदार किसानों को जमीन से बेदखल कर देता है। उनके घर व गांव भी खाली करा लिए जाते हैं। ऐसी स्थिति में वे हलवाहे किसान गाड़िया लुहार बनने को विवश हो जाते हैं।9 इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में भी सामंती शोषण का ही जीवंत चित्रण लेखक ने किया है।

दुःखद स्थिति यह भी है कि आज अमीर और गरीब की खाई बढ़ती जा रही है। अमीर और अमीर होता जा रहा है, तो गरीब की स्थिति दिन-प्रतिदिन और खराब होती जा रही है। बीज, खाद, बिजली के बढ़ते दामों ने तो किसानों की कमर ही तोड़ दी है। अधिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों के प्रयोग के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति भी कमजोर हो गई है। रही सही कमी कर्ज और अकाल पूरी कर दते हैं।

## निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ. धर्मचंद विद्यालंकार ने भारतीय कृषक की कारुणिक दशा का मार्मिक वर्णन यर्थाथ रुप में किया है। बड़े-बड़े पूंजीपति व उद्योगपतियों किसानों की भूमि को सस्तेदामों में खरीदकर उन्हें मजदूर बनने पर विवश कर देते हैं। किसान जो सब चीजों को उत्पन्न करने वाला है, वही उन चीजों के लिए तरसता रहता है। वह वर्षभर जी भर मेहनत करके जो कमाता है वह तो आढ़ती के पिछले खर्चे में चला जाता है और वही अनाज उसके अगले साल ब्याज पर दे दिया जाता है। वह अपने परिवार के लिए दो जून की रोटी भी नहीं जुटा पाता। वह न तो स्वयं पढ़ लिख सका और नहीं अपने बच्चों का अच्छा पढ़ा लिखा सकता है। वह अभाव में ही पैदा होता है और अभाव में ही इस संसार से विदा हो जाता है।

## संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ.धर्मचन्द विद्यालंकार, चैबीसी का चबूतरा, आधुनिक प्रकाशन, गुरुद्वारा मोहल्ला, मौजपुर दिल्ली, 1999, पृष्ठ 26
2. वही, पृष्ठ 28, 3. वही, पृष्ठ 28
4. वही, पृष्ठ 28, 5. वही, पृष्ठ 12
6. वही, पृष्ठ 74
7. वही, पृष्ठ 74
8. वही, पृष्ठ 75
9. वही, पृष्ठ 103
10. डॉ. धर्मचंद विद्यालंकार, पगड़ी सम्भाल जट्टा, आधुनिक प्रकाशन मौजपुर, दिल्ली, 1999, पृष्ठ 104